



हन्ना अरेंट की तानाशाही, आज्ञापालन और बुराई की अवधारणा का समीक्षात्मक अध्ययन

मोहम्मद आकिफ तौफ़ीक

(असिस्टेंट प्रोफेसर), गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज गणेशपुरा, बबीना, झाँसी

DOI : <https://doi.org/10.5281/zenodo.18267339>

1. भूमिका और वैचारिक पृष्ठभूमि

बीसवीं शताब्दी विश्व इतिहास की सबसे उथल-पुथल भरी शताब्दी मानी जाती है। इस कालखंड में दो विश्व युद्ध, साम्राज्यवाद का पतन, राष्ट्र-राज्यों का उदय तथा नई राजनीतिक विचारधाराओं का विकास हुआ। इसी दौर में नाज़ी जर्मनी और स्तालिनवादी सोवियत संघ जैसे तानाशाही शासन अस्तित्व में आए, जिन्होंने मानव स्वतंत्रता, नैतिकता और गरिमा को गंभीर रूप से प्रभावित किया। इन शासन-प्रणालियों में न केवल राजनीतिक विरोध का दमन हुआ, बल्कि सामान्य नागरिक भी बड़े पैमाने पर अमानवीय कृत्यों में सहभागी बने।

इसी ऐतिहासिक संदर्भ में हन्ना अरेंट का चिंतन विकसित हुआ। उनका उद्देश्य यह समझना था कि आधुनिक युग में तानाशाही कैसे संभव हुई और किस प्रकार सामान्य व्यक्ति भी अत्याचार की प्रक्रिया का हिस्सा बन गया। अरेंट का योगदान इसलिए विशिष्ट है क्योंकि उन्होंने तानाशाही को केवल सत्ता या शासन की समस्या के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे मानवीय विवेक, नैतिक निर्णय और आज्ञापालन के संकट से जोड़ा।

1.1 विषय की प्रासंगिकता

आज के समकालीन विश्व में, जहाँ लोकतंत्र के साथ-साथ अधिनायकवादी प्रवृत्तियाँ भी उभर रही हैं, हन्ना अरेंट के विचार अत्यंत प्रासंगिक हो जाते हैं। नौकरशाही, तकनीकी नियंत्रण, निगरानी तंत्र और आदेश-पालन की संस्कृति ने व्यक्ति को एक प्रणालीगत इकाई में बदल दिया है। ऐसे में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है कि व्यक्ति की नैतिक जिम्मेदारी कहाँ समाप्त होती है और सत्ता की भूमिका कहाँ शुरू होती है।



अरेंट की “बुराई की सामान्यता” की अवधारणा आज भी हमें चेतावनी देती है कि बुराई हमेशा हिंसक या असाधारण रूप में प्रकट नहीं होती, बल्कि कई बार वह सामान्य, रोज़मर्रा और वैधानिक रूप में सामने आती है। अतः यह विषय केवल ऐतिहासिक अध्ययन तक सीमित न होकर वर्तमान सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों को समझने में भी सहायक है।

1.2 अध्ययन के उद्देश्य

इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- हन्ना अरेंट की तानाशाही संबंधी अवधारणा का विश्लेषण करना।
- आज़ापालन और नौकरशाही की भूमिका को समझना।
- “बुराई की सामान्यता” की अवधारणा का दार्शनिक और नैतिक विवेचन करना।
- इन तीनों अवधारणाओं के आपसी संबंधों का अध्ययन करना।
- हन्ना अरेंट के विचारों की समकालीन प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

1.3 शोध प्रश्न

यह अध्ययन निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास करता है-

- तानाशाही शासन आधुनिक युग में कैसे विकसित हुआ?
- सामान्य व्यक्ति तानाशाही के अपराधों में कैसे सहभागी बनता है?
- आज़ापालन और नैतिक उत्तरदायित्व के बीच क्या संबंध है?
- “बुराई की सामान्यता” आधुनिक समाज के लिए क्या चेतावनी देती है?

1.4 अध्ययन की पद्धति

यह अध्ययन मुख्यतः वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें हन्ना अरेंट की प्रमुख कृतियों—The Origins of Totalitarianism और Eichmann in Jerusalem—का गहन अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ द्वितीयक स्रोतों, शोध-पत्रों और आलोचनात्मक लेखों का भी उपयोग किया गया है।

1.5 शोध की प्रासंगिकता

वर्तमान अध्ययन की प्रासंगिकता इस तथ्य में निहित है कि हन्ना अरेंट का चिंतन आधुनिक राजनीतिक, सामाजिक और नैतिक संकटों को समझने की एक सशक्त वैचारिक रूपरेखा प्रदान करता है।



तानाशाही, आज़ापालन और बुराई की सामान्यता जैसी अवधारणाएँ केवल बीसवीं शताब्दी की ऐतिहासिक घटनाओं तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे आज के समकालीन विश्व में भी विभिन्न रूपों में दिखाई देती हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के भीतर बढ़ती अधिनायकवादी प्रवृत्तियाँ, नौकरशाही का विस्तार, तकनीकी निगरानी और आदेश-पालन की संस्कृति व्यक्ति की स्वतंत्र सोच और नैतिक विवेक को कमजोर कर रही हैं।

यह शोध इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि यह स्पष्ट करता है कि तानाशाही केवल सत्ता के दमन से नहीं, बल्कि सामान्य नागरिकों की निष्क्रियता, आज़ापालन और नैतिक उदासीनता से भी सशक्त होती है। “बुराई की सामान्यता” की अवधारणा हमें यह समझने में सहायता देती है कि गंभीर अपराध हमेशा असाधारण या विकृत मानसिकता का परिणाम नहीं होते, बल्कि वे साधारण व्यक्तियों द्वारा, बिना सोचे-समझे किए गए कर्मों से भी उत्पन्न हो सकते हैं।

अतः यह अध्ययन राजनीतिक सिद्धांत, नैतिक दर्शन और समकालीन समाज के अंतर्संबंधों को उजागर करता है तथा नागरिक चेतना, उत्तरदायित्व और आलोचनात्मक सोच के महत्व को रेखांकित करता है।

2. साहित्य समीक्षा

हन्ना अरेंट के राजनीतिक और दार्शनिक चिंतन पर विश्व स्तर पर व्यापक साहित्य उपलब्ध है। उनकी तानाशाही, आज़ापालन और “बुराई की सामान्यता” की अवधारणाओं ने आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत, नैतिक दर्शन और इतिहास-लेखन को गहराई से प्रभावित किया है। प्रस्तुत साहित्य समीक्षा का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि विद्वानों ने अरेंट के विचारों को किस प्रकार समझा, व्याख्यायित किया और आलोचनात्मक दृष्टि से परखा है, साथ ही यह भी दिखाना है कि वर्तमान शोध किस बिंदु पर नया योगदान करता है।

2.1. हन्ना अरेंट पर प्रमुख अध्ययन

हन्ना अरेंट के चिंतन पर सबसे महत्वपूर्ण कृति उनकी स्वयं की पुस्तक *The Origins of Totalitarianism* (1951) मानी जाती है। इस ग्रंथ में उन्होंने नाज़ीवाद और स्तालिनवाद को आधुनिक तानाशाही के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है। अरेंट के अनुसार, तानाशाही की विशेषता विचारधारा और आतंक का संयोजन है, जो व्यक्ति की स्वतंत्रता और नैतिक विवेक को नष्ट कर देता है। इस कृति



पर कई विद्वानों ने टिप्पणी की है। जॉर्ज कैटे, रेमंड ऐरॉन और क्लॉड लेफोर्ट जैसे विचारकों ने अरेंट के तानाशाही विश्लेषण को आधुनिक राजनीति की समझ के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना है।

हन्ना अरेंट की दूसरी प्रमुख कृति The Human Condition में उनके राजनीतिक दर्शन का मानवीय पक्ष सामने आता है। यद्यपि यह पुस्तक प्रत्यक्ष रूप से तानाशाही पर केंद्रित नहीं है, फिर भी इसमें “क्रिया”, “श्रम” और “कार्य” की अवधारणाओं के माध्यम से सार्वजनिक जीवन और नागरिक सहभागिता का महत्व स्पष्ट होता है, जो तानाशाही के प्रतिरोध की आधारभूमि प्रदान करता है।

2.2. तानाशाही सिद्धांत से संबंधित साहित्य

तानाशाही पर उपलब्ध साहित्य में कार्ल फ्रेडरिक और ज़िबगन्यू ब्रेज़िंस्की का कार्य उल्लेखनीय है, जिन्होंने तानाशाही को एक संस्थागत और वैचारिक व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया। हालांकि, इन विद्वानों का दृष्टिकोण अधिक संरचनात्मक और संस्थागत है, जबकि अरेंट का दृष्टिकोण सामाजिक और नैतिक आयामों पर केंद्रित है।

एरिक फ्रॉम ने Escape from Freedom में यह तर्क दिया कि आधुनिक व्यक्ति स्वतंत्रता के बोझ से बचने के लिए अधिनायकवादी व्यवस्थाओं की ओर आकर्षित होता है। फ्रॉम का यह मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अरेंट के एकाकीकरण (Isolation) के सिद्धांत से मेल खाता है। इसी प्रकार, मिशेल फूको ने सत्ता और अनुशासन पर अपने अध्ययन में आधुनिक समाज में नियंत्रण की सूक्ष्म प्रक्रियाओं को उजागर किया, जो अप्रत्यक्ष रूप से अरेंट के तानाशाही विश्लेषण को विस्तार देता है।

3.3. आज्ञापालन और नैतिकता पर अध्ययन

आज्ञापालन की समस्या पर सबसे चर्चित अध्ययन स्टैनली मिलग्राम का प्रयोगात्मक शोध है। मिलग्राम के प्रयोगों ने यह दिखाया कि सामान्य व्यक्ति भी सत्ता के आदेश पर गंभीर हिंसक कृत्य कर सकता है। कई विद्वानों ने मिलग्राम के निष्कर्षों को हन्ना अरेंट की “बुराई की सामान्यता” की अवधारणा के साथ जोड़कर देखा है।

हर्बर्ट मार्क्यूज़ और मैक्स वेबर ने नौकरशाही और आज्ञापालन की संस्कृति पर प्रकाश डाला है। वेबर के अनुसार, आधुनिक नौकरशाही तर्कसंगत होते हुए भी व्यक्ति को एक “आदेश-पालक” में बदल देती है। अरेंट इस दृष्टिकोण को आगे बढ़ाते हुए यह दिखाती हैं कि जब व्यक्ति केवल आदेशों का पालन करता है, तब वह अपनी नैतिक जिम्मेदारी से विमुख हो जाता है।

2.4. “बुराई की सामान्यता” पर विद्वानों की व्याख्याएँ

Eichmann in Jerusalem (1963) अरेंट की सबसे विवादास्पद कृति मानी जाती है। इस पुस्तक में प्रस्तुत “बुराई की सामान्यता” की अवधारणा पर व्यापक बहस हुई। गेरशोम शोलम और अन्य यहूदी विद्वानों ने अरेंट पर यह आरोप लगाया कि उन्होंने आइखमान के अपराधों को कमतर करके प्रस्तुत किया।

इसके विपरीत, हाना पिटकिन और रिचर्ड बर्नस्टीन जैसे विद्वानों ने अरेंट का समर्थन करते हुए कहा कि उनका उद्देश्य अपराधों को उचित ठहराना नहीं था, बल्कि आधुनिक समाज में बुराई के नए स्वरूप को समझाना था। बर्नस्टीन के अनुसार, अरेंट की अवधारणा नैतिक दर्शन को एक नई दिशा देती है, क्योंकि यह बुराई को असाधारण दुष्टता के बजाय सोच की अनुपस्थिति से जोड़ती है।

3. सैद्धांतिक रूपरेखा (Theoretical Framework)

प्रस्तुत शोध की सैद्धांतिक रूपरेखा हन्ना अरेंट के राजनीतिक चिंतन पर आधारित है, जिसमें तानाशाही, आज्ञापालन और नैतिक उत्तरदायित्व की अवधारणाएँ केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। किसी भी शोध की सैद्धांतिक रूपरेखा यह स्पष्ट करती है कि अध्ययन किन अवधारणाओं, सिद्धांतों और वैचारिक दृष्टिकोणों पर आधारित है। इस शोध में अरेंट के सिद्धांतों को एक समग्र ढाँचे के रूप में ग्रहण किया गया है, ताकि आधुनिक राजनीति में सत्ता, व्यक्ति और बुराई के अंतर्संबंधों को समझा जा सके।

3.1 तानाशाही की सैद्धांतिक अवधारणा

हन्ना अरेंट के अनुसार तानाशाही केवल एक राजनीतिक शासन-पद्धति नहीं, बल्कि एक ऐसी समग्र व्यवस्था है जो समाज, व्यक्ति और विचार-तीनों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित करती है। पारंपरिक तानाशाही में सत्ता का केंद्रीकरण तो होता है, किंतु सामाजिक जीवन का संपूर्ण नियंत्रण नहीं। इसके विपरीत, आधुनिक तानाशाही विचारधारा और आतंक के माध्यम से व्यक्ति के निजी और सार्वजनिक दोनों जीवन को नियंत्रित करती है।

अरेंट की तानाशाही अवधारणा इस धारणा पर आधारित है कि आधुनिक समाज में जनसमूह (Mass Society) और एकाकीकरण (Isolation) व्यक्ति को सत्ता के प्रति अधिक संवेदनशील बना देते हैं। जब सामाजिक संबंध कमजोर पड़ते हैं, तब व्यक्ति एक सर्वग्राही विचारधारा का सहारा लेता है, जो उसे पहचान और उद्देश्य प्रदान करती है।

3.2 आज्ञापालन और नौकरशाही सिद्धांत

इस सैद्धांतिक ढाँचे का दूसरा महत्वपूर्ण आधार आज्ञापालन की अवधारणा है। मैक्स वेबर के नौकरशाही सिद्धांत के अनुसार, आधुनिक प्रशासन तर्कसंगत नियमों और आदेशों पर आधारित होता है। हालांकि, यह तर्कसंगतता व्यक्ति को नैतिक निर्णय से दूर भी कर सकती है।

अरेंट इस विचार को आगे बढ़ाते हुए बताती हैं कि तानाशाही में आज्ञापालन केवल प्रशासनिक आवश्यकता नहीं, बल्कि नैतिक निष्क्रियता का रूप ले लेता है। व्यक्ति स्वयं को “आदेश का पालन करने वाला” मानकर अपने कर्मों की जिम्मेदारी सत्ता पर डाल देता है। इस प्रकार आज्ञापालन बुराई का एक प्रभावी माध्यम बन जाता है।

3.3 नैतिकता और उत्तरदायित्व का सिद्धांत

हन्ना अरेंट का नैतिक दर्शन कांट के नैतिक सिद्धांत से प्रभावित है, विशेषतः आत्म-चिंतन और विवेक की अवधारणा से। अरेंट के अनुसार नैतिकता का मूल आधार “सोचने की क्षमता” है। जब व्यक्ति सोचता है, प्रश्न करता है और आत्म-संवाद करता है, तभी वह सही-गलत का भेद कर पाता है।

तानाशाही व्यवस्था में यह सोचने की क्षमता बाधित हो जाती है। व्यक्ति नियमों और आदेशों में इतना उलझ जाता है कि वह अपने कार्यों के नैतिक परिणामों पर विचार नहीं करता। इस प्रकार नैतिक उत्तरदायित्व का हास होता है, जो बुराई की सामान्यता को जन्म देता है।

3.4 हन्ना अरेंट का राजनीतिक दृष्टिकोण

अरेंट स्वयं को पारंपरिक दार्शनिक न मानकर राजनीतिक सिद्धांतकार मानती थीं। उनका राजनीतिक दृष्टिकोण मानव स्वतंत्रता, सार्वजनिक क्षेत्र और नागरिक सहभागिता पर आधारित है। The Human Condition में उन्होंने “क्रिया” (Action) को राजनीति का सार बताया है।

इस शोध की सैद्धांतिक रूपरेखा अरेंट के इसी दृष्टिकोण को आधार बनाती है, जिसमें राजनीति केवल सत्ता संघर्ष नहीं, बल्कि नैतिक और मानवीय क्रिया का क्षेत्र है। तानाशाही इसी क्रिया को नष्ट कर देती है और व्यक्ति को निष्क्रिय आज्ञापालक में बदल देती है।

4. तानाशाही की अवधारणा : हन्ना अरेंट का विश्लेषण

हन्ना अरेंट का तानाशाही संबंधी विश्लेषण आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत में एक महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। उन्होंने तानाशाही को पारंपरिक निरंकुश शासन से अलग एक नई राजनीतिक परिघटना के रूप में प्रस्तुत किया।

4.1 तानाशाही की परिभाषा और स्वरूप

अरेंट के अनुसार तानाशाही वह व्यवस्था है जिसमें सत्ता का उद्देश्य केवल शासन करना नहीं, बल्कि मानव समाज और चेतना को पूर्णतः नियंत्रित करना होता है। इसमें कानून का स्थान विचारधारा ले लेती है और न्याय का स्थान आतंक। तानाशाही में व्यक्ति को केवल साधन के रूप में देखा जाता है।

4.2 विचारधारा और आतंक का संबंध

अरेंट के विश्लेषण में विचारधारा और आतंक तानाशाही के दो मुख्य स्तंभ हैं। विचारधारा इतिहास को एक निश्चित दिशा में ले जाने का दावा करती है और व्यक्ति को यह विश्वास दिलाती है कि सत्ता जो कर रही है वह “अनिवार्य” है। आतंक इस विचारधारा को लागू करने का साधन बनता है।

आतंक केवल शारीरिक हिंसा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि भय, निगरानी और असुरक्षा के माध्यम से व्यक्ति की सोच को नियंत्रित करता है।

4.3 जनसमूह, एकाकीकरण और नियंत्रण

तानाशाही के उदय में जनसमूह समाज की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अरेंट के अनुसार आधुनिक समाज में परंपरागत सामाजिक बंधनों के टूटने से व्यक्ति एकाकी हो जाता है। यह एकाकी व्यक्ति तानाशाही विचारधारा के प्रति अधिक आकर्षित होता है, क्योंकि वह उसे पहचान और सुरक्षा का भ्रम प्रदान करती है। एकाकीकरण तानाशाही के लिए अनुकूल वातावरण बनाता है, जहाँ व्यक्ति प्रतिरोध करने में असमर्थ हो जाता है।

4.4 नाज़ीवाद और स्तालिनवाद का तुलनात्मक अध्ययन

अरेंट ने नाज़ी जर्मनी और स्तालिनवादी सोवियत संघ का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए यह दिखाया कि यद्यपि दोनों की विचारधाराएँ भिन्न थीं, किंतु उनकी संरचना समान थी। दोनों में एक दल, एक नेता, एक विचारधारा और आतंक का व्यापक उपयोग पाया जाता है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि तानाशाही किसी एक संस्कृति या राष्ट्र तक सीमित नहीं है, बल्कि आधुनिक परिस्थितियों में कहीं भी उत्पन्न हो सकती है।

5. आज्ञापालन, नौकरशाही और नैतिक निष्क्रियता

हन्ना अरेंट के राजनीतिक चिंतन में आज्ञापालन (Obedience) की अवधारणा एक केंद्रीय स्थान रखती है। उनके अनुसार तानाशाही शासन केवल सत्ता के बल पर नहीं टिकता, बल्कि वह सामान्य व्यक्तियों की आज्ञापालक मानसिकता पर निर्भर करता है। आधुनिक समाज में नौकरशाही, प्रशासनिक तंत्र और कानूनी ढाँचे व्यक्ति को इस प्रकार प्रशिक्षित करते हैं कि वह आदेशों को नैतिक प्रश्नों से ऊपर मानने लगता है। यही प्रवृत्ति तानाशाही में नैतिक निष्क्रियता को जन्म देती है।

5.1 आज्ञापालन का सामाजिक-राजनीतिक अर्थ

आज्ञापालन को सामान्यतः अनुशासन और सामाजिक व्यवस्था के लिए आवश्यक माना जाता है, किंतु अरेंट इस धारणा की आलोचना करती हैं। उनके अनुसार, जब आज्ञापालन विवेक और नैतिक निर्णय का स्थान ले लेता है, तब वह विनाशकारी हो जाता है। तानाशाही शासन में आज्ञापालन एक नैतिक गुण नहीं, बल्कि सत्ता के प्रति समर्पण का रूप ले लेता है।

अरेंट यह स्पष्ट करती हैं कि तानाशाही में व्यक्ति आदेशों को इसलिए नहीं मानता क्योंकि वे न्यायसंगत हैं, बल्कि इसलिए क्योंकि वे “कानूनी” और “आधिकारिक” हैं। इस प्रकार नैतिकता का स्थान वैधानिकता ले लेती है।

5.2 आदेश, कानून और व्यक्तिगत निर्णय

हन्ना अरेंट कानून और आदेश के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर स्थापित करती हैं। उनके अनुसार कानून का उद्देश्य न्याय और स्थायित्व होता है, जबकि तानाशाही में आदेश केवल सत्ता की इच्छा को प्रतिबिंबित करते हैं। व्यक्ति जब आदेश को कानून मान लेता है, तब वह अपने व्यक्तिगत निर्णय की क्षमता खो देता है।

यह स्थिति विशेष रूप से नौकरशाही संरचनाओं में स्पष्ट दिखाई देती है, जहाँ कार्य विभाजन और उत्तरदायित्व का विखंडन होता है। प्रत्येक अधिकारी केवल अपने “कार्य-क्षेत्र” तक सीमित रहता है और पूरे कृत्य की नैतिक जिम्मेदारी से स्वयं को मुक्त मानता है।

5.3 नौकरशाही और उत्तरदायित्व का संकट

मैक्स वेबर ने नौकरशाही को आधुनिक राज्य की सबसे तर्कसंगत व्यवस्था माना था, किंतु अरेंट ने इसके नैतिक परिणामों पर गंभीर प्रश्न उठाए। उनके अनुसार, नौकरशाही व्यक्ति को एक “फंक्शनरी” में बदल देती है, जहाँ वह केवल प्रक्रिया का पालन करता है, परिणामों पर नहीं सोचता।

तानाशाही में यही नौकरशाही बुराई को संगठित और कुशल बनाती है। आदेश ऊपर से आते हैं, क्रियान्वयन नीचे होता है और उत्तरदायित्व कहीं भी स्पष्ट नहीं होता। इस संरचना में नैतिक अपराध “व्यक्तिगत नहीं, प्रणालीगत” प्रतीत होने लगते हैं।

5.4 सोचने की क्षमता (Thinking) और नैतिकता

अरेंट के अनुसार, आज्ञापालन का सबसे खतरनाक परिणाम “सोचने की क्षमता” का क्षय है। सोचने से उनका आशय केवल बौद्धिक क्रिया से नहीं, बल्कि आत्म-संवाद और नैतिक चिंतन से है। जब व्यक्ति आदेशों का यांत्रिक पालन करता है, तब वह अपने भीतर यह प्रश्न पूछना बंद कर देता है— “क्या यह सही है?”

इस प्रकार आज्ञापालन तानाशाही में नैतिक निष्क्रियता को जन्म देता है, जहाँ व्यक्ति बुराई का प्रत्यक्ष विरोध नहीं करता, बल्कि उसे सामान्य और स्वीकार्य मान लेता है।

6. बुराई की सामान्यता (Banality of Evil)

“बुराई की सामान्यता” हन्ना अरेंट की सबसे चर्चित और विवादास्पद अवधारणा है। यह अवधारणा उन्होंने नाज़ी अधिकारी एडॉल्फ आइखमान के मुकदमे के अवलोकन के दौरान विकसित की, जिसे उन्होंने Eichmann in Jerusalem में प्रस्तुत किया। इस अवधारणा ने बुराई की पारंपरिक समझ को मौलिक रूप से चुनौती दी।

6.1 अवधारणा का उद्भव : आइखमान मुकदमा

अरेंट ने पाया कि आइखमान कोई असाधारण रूप से क्रूर या मानसिक रूप से विकृत व्यक्ति नहीं था। वह एक साधारण नौकरशाह था, जो अपने कार्य को “कर्तव्य” मानकर कर रहा था। उसने अपने बचाव में बार-बार कहा कि वह केवल आदेशों का पालन कर रहा था।

यहीं से अरेंट ने यह निष्कर्ष निकाला कि आधुनिक युग में बुराई का स्वरूप बदल गया है। वह अब शैतानी इरादों से नहीं, बल्कि सोच की अनुपस्थिति से उत्पन्न होती है।

6.2 साधारण व्यक्ति और असाधारण अपराध

“बुराई की सामान्यता” का अर्थ यह नहीं है कि बुराई छोटी या क्षम्य है, बल्कि यह कि वह साधारण लोगों द्वारा, सामान्य परिस्थितियों में की जा सकती है। अरेंट के अनुसार, जब व्यक्ति अपने कर्मों के नैतिक परिणामों पर विचार नहीं करता, तब वह भीषण अपराधों में सहभागी बन सकता है।

यह अवधारणा यह भी दर्शाती है कि आधुनिक राज्य और नौकरशाही अपराध को इस प्रकार व्यवस्थित कर देती है कि वह व्यक्तिगत अनुभव से कट जाता है।

6.3 बुराई, सोच और नैतिक विवेक

अरेंट ने बुराई को “कट्टर दुष्टता” (Radical Evil) के बजाय “सोच के अभाव” से जोड़ा। उनके अनुसार, आइखमान की सबसे बड़ी समस्या यह थी कि वह सोचने में असमर्थ था। वह clichés और आधिकारिक भाषा में सोचता था, न कि नैतिक विवेक के आधार पर।

इस संदर्भ में अरेंट कांट के नैतिक दर्शन से प्रेरणा लेती हैं, जहाँ आत्म-चिंतन नैतिकता का मूल आधार है। सोच का अभाव व्यक्ति को नैतिक रूप से अंधा बना देता है।

6.4 व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का प्रश्न

अरेंट स्पष्ट रूप से कहती हैं कि “आदेश का पालन” नैतिक उत्तरदायित्व से मुक्ति नहीं देता। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मों के लिए स्वयं उत्तरदायी है, चाहे वह किसी भी व्यवस्था का हिस्सा क्यों न हो।

“बुराई की सामान्यता” इस तथ्य को उजागर करती है कि आधुनिक समाज में सबसे बड़ा खतरा उन लोगों से नहीं है जो खुले रूप से बुरे हैं, बल्कि उनसे है जो बिना सोचे, बिना प्रश्न किए, प्रणाली का हिस्सा बन जाते हैं।

7. तानाशाही, आज्ञापालन और बुराई: अंतर्संबंध

हन्ना अरेंट के राजनीतिक चिंतन में तानाशाही, आज्ञापालन और बुराई की सामान्यता अलग-अलग अवधारणाएँ न होकर एक ही वैचारिक संरचना के परस्पर जुड़े हुए आयाम हैं। अरेंट यह स्पष्ट करती हैं कि आधुनिक तानाशाही केवल सत्ता की क्रूरता का परिणाम नहीं होती, बल्कि वह उन सामाजिक, प्रशासनिक और नैतिक परिस्थितियों से जन्म लेती है, जहाँ व्यक्ति सोचने, प्रश्न करने और उत्तरदायित्व लेने की क्षमता खो देता है। इस संदर्भ में ये तीनों अवधारणाएँ एक-दूसरे को पोषित करती हैं।

7.1 संरचनात्मक और वैचारिक संबंध

तानाशाही एक ऐसी राजनीतिक संरचना निर्मित करती है जिसमें विचारधारा सर्वोच्च हो जाती है। यह विचारधारा इतिहास, समाज और मानव व्यवहार को एक अपरिवर्तनीय नियम के रूप में प्रस्तुत करती है। व्यक्ति को यह विश्वास दिलाया जाता है कि जो कुछ हो रहा है, वह “अनिवार्य” और “ऐतिहासिक रूप से सही” है। इस वैचारिक दबाव के भीतर आज्ञापालन स्वाभाविक व्यवहार बन जाता है।

आज्ञापालन तानाशाही की संरचना को कार्यशील बनाता है। बिना व्यापक आज्ञापालन के न तो विचारधारा लागू हो सकती है और न ही आतंक प्रभावी हो सकता है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति धीरे-धीरे नैतिक प्रश्न पूछना बंद कर देता है, जिससे बुराई का सामान्यीकरण होता है।

7.2 भय, चुप्पी और सहभागिता

अरेंट के अनुसार, तानाशाही केवल सक्रिय हिंसा से नहीं, बल्कि भय और चुप्पी से भी संचालित होती है। आतंक का उद्देश्य केवल विरोधियों को समाप्त करना नहीं होता, बल्कि शेष समाज को मौन बना देना होता है। जब भय व्यापक हो जाता है, तब व्यक्ति प्रतिरोध के बजाय अनुकूलन (Adaptation) को चुनता है।

यह चुप्पी तानाशाही की सबसे बड़ी शक्ति बन जाती है। व्यक्ति स्वयं को “तटस्थ” मानता है, किंतु वास्तव में वह व्यवस्था का सहभागी बन जाता है। इस सहभागिता में बुराई किसी व्यक्तिगत निर्णय के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक प्रक्रिया के रूप में घटित होती है।

7.3 सत्ता, प्रणाली और व्यक्ति

अरेंट सत्ता को केवल शीर्ष पर स्थित शक्ति नहीं मानती, बल्कि उसे एक ऐसी प्रणाली के रूप में देखती हैं, जो नीचे तक फैली होती है। इस प्रणाली में प्रत्येक व्यक्ति एक छोटा-सा कार्य करता है, जिसका समग्र परिणाम विनाशकारी होता है।

तानाशाही व्यक्ति को यह विश्वास दिलाती है कि उसका योगदान नगण्य है, इसलिए उसकी नैतिक जिम्मेदारी भी सीमित है। यही भ्रम बुराई को संभव बनाता है। बुराई यहाँ किसी एक व्यक्ति की दुर्भावना नहीं, बल्कि पूरी प्रणाली की कार्यप्रणाली बन जाती है।

7.4 अरेंट की समग्र व्याख्या

अरेंट की सबसे मौलिक देन यह है कि उन्होंने बुराई को नैतिक विकृति के बजाय राजनीतिक और सामाजिक परिस्थिति से जोड़ा। उनके अनुसार, जब तानाशाही व्यक्ति को एकाकी बनाती है, आज्ञापालन को आदर्श बनाती है और सोचने की क्षमता को निष्क्रिय कर देती है, तब बुराई स्वतः सामान्य हो जाती है।

इस प्रकार तानाशाही, आज्ञापालन और बुराई एक ही दुष्चक्र के तीन चरण हैं—

- तानाशाही संरचना बनाती है,
- आज्ञापालन उसे क्रियाशील करता है,
- और बुराई उसका नैतिक परिणाम होती है।

8. आलोचनात्मक मूल्यांकन

हन्ना अरेंट का चिंतन जितना प्रभावशाली है, उतना ही विवादास्पद भी रहा है। विशेष रूप से उनकी “बुराई की सामान्यता” की अवधारणा ने तीखी आलोचनाओं को जन्म दिया। इस खंड में अरेंट के विचारों की प्रमुख आलोचनाओं, उनकी सीमाओं तथा समकालीन प्रत्युत्तरों का विश्लेषण किया जा रहा है।

8.1 अरेंट पर प्रमुख आलोचनाएँ

सबसे तीखी आलोचना अरेंट पर यह की गई कि उन्होंने एडॉल्फ आइखमान को एक “साधारण” व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करके उसके अपराधों की गंभीरता को कमतर आँका। गेरशोम शोलम जैसे विद्वानों ने आरोप लगाया कि अरेंट में यहूदी समुदाय के प्रति “सहानुभूति की कमी” है।

कुछ इतिहासकारों का यह भी कहना है कि अरेंट ने आइखमान की वैचारिक प्रतिबद्धता को कम करके आँका और उसे केवल एक आज्ञापालक नौकरशाह के रूप में चित्रित किया।



8.2 आइखमान विश्लेषण पर विवाद

आइखमान के बाद के ऐतिहासिक दस्तावेजों से यह संकेत मिला कि वह नाज़ी विचारधारा से अपेक्षाकृत अधिक जुड़ा हुआ था, जितना अरेंट ने बताया। इस आधार पर यह तर्क दिया गया कि “बुराई की सामान्यता” एक अधूरी व्याख्या है।

हालाँकि, अरेंट के समर्थकों का कहना है कि उनका उद्देश्य आइखमान का चरित्र चित्रण नहीं, बल्कि उस प्रणाली को समझना था जिसने ऐसे अपराधों को संभव बनाया।

8.3 वैचारिक सीमाएँ

अरेंट के चिंतन की एक सीमा यह भी मानी जाती है कि उन्होंने आर्थिक कारकों और वर्ग-संघर्ष को अपेक्षाकृत कम महत्व दिया। मार्क्सवादी विद्वानों के अनुसार, तानाशाही के उदय में पूँजीवाद, साम्राज्यवाद और आर्थिक असमानता की भूमिका को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

इसके अतिरिक्त, अरेंट का विश्लेषण मुख्यतः यूरोपीय अनुभवों तक सीमित है, जिससे उसकी सार्वभौमिकता पर प्रश्न उठते हैं।

8.4 प्रत्युत्तर और पुनर्मूल्यांकन

इन आलोचनाओं के बावजूद, समकालीन विद्वान अरेंट के चिंतन को पुनः मूल्यांकित कर रहे हैं। निगरानी-राज्य, एल्गोरिदमिक शासन और प्रशासनिक निर्णयों के युग में “सोच की अनुपस्थिति” और भी अधिक प्रासंगिक हो गई है।

आज यह स्पष्ट होता जा रहा है कि अरेंट का मुख्य योगदान अपराधियों को निर्दोष ठहराना नहीं, बल्कि यह चेतावनी देना है कि आधुनिक समाज में बुराई का सबसे खतरनाक रूप वही है जो सामान्य, वैधानिक और अदृश्य बन जाए।

References

- Arendt, H. (1951). *The origins of totalitarianism*. New York, NY: Harcourt, Brace & Company.
- Arendt, H. (1958). *The human condition*. Chicago, IL: University of Chicago Press.
- Arendt, H. (1963). *Eichmann in Jerusalem: A report on the banality of evil*. New York, NY: Viking Press.
- Arendt, H. (1970). *On violence*. New York, NY: Harcourt Brace Jovanovich.



- Arendt, H. (1971). Thinking and moral considerations. *Social Research*, 38(3), 417–446.
- Arendt, H. (1978). *The life of the mind*. New York, NY: Harcourt Brace Jovanovich.
- Bernstein, R. J. (1996). *Hannah Arendt and the Jewish question*. Cambridge, MA: MIT Press.
- Bernstein, R. J. (2002). *Radical evil: A philosophical interrogation*. Cambridge: Polity Press.
- Canovan, M. (1992). *Hannah Arendt: A reinterpretation of her political thought*. Cambridge: Cambridge University Press.
- Frischmann, B., & Selinger, E. (2018). *Re-engineering humanity*. Cambridge: Cambridge University Press.
- Friedrich, C. J., & Brzezinski, Z. K. (1956). *Totalitarian dictatorship and autocracy*. Cambridge, MA: Harvard University Press.
- Fromm, E. (1941). *Escape from freedom*. New York, NY: Farrar & Rinehart.
- Foucault, M. (1977). *Discipline and punish: The birth of the prison*. New York, NY: Pantheon Books.
- Habermas, J. (1989). *The structural transformation of the public sphere*. Cambridge, MA: MIT Press.
- Kohn, J. (Ed.). (2003). *Hannah Arendt: Essays in understanding 1930–1954*. New York, NY: Schocken Books.
- Kateb, G. (1984). *Hannah Arendt: Politics, conscience, evil*. Totowa, NJ: Rowman & Allanheld.
- Lefort, C. (1986). *The political forms of modern society*. Cambridge: Polity Press.
- Milgram, S. (1974). *Obedience to authority: An experimental view*. New York, NY: Harper & Row.
- Pitkin, H. F. (1981). Justice: On relating private and public. *Political Theory*, 9(3), 327–352.
- Shklar, J. N. (1984). *Ordinary vices*. Cambridge, MA: Harvard University Press.
- Scholem, G. (1964). Eichmann in Jerusalem: An exchange of letters. *Encounter*, 22(1), 63–67.
- Strauss, L. (1953). *Natural right and history*. Chicago, IL: University of Chicago Press.
- Villa, D. (1999). *Politics, philosophy, terror: Essays on the thought of Hannah Arendt*. Princeton, NJ: Princeton University Press.
- Weber, M. (1947). *The theory of social and economic organization*. New York, NY: Oxford University Press.
- Young-Bruehl, E. (1982). *Hannah Arendt: For love of the world*. New Haven, CT: Yale University Press.
- Bauman, Z. (1989). *Modernity and the Holocaust*. Ithaca, NY: Cornell University Press.



- Benhabib, S. (1996). *The reluctant modernism of Hannah Arendt*. Thousand Oaks, CA: Sage Publications.
- Kelman, H. C., & Hamilton, V. L. (1989). *Crimes of obedience*. New Haven, CT: Yale University Press.
- Agamben, G. (1998). *Homo sacer: Sovereign power and bare life*. Stanford, CA: Stanford University Press.
- Butler, J. (2004). *Precarious life: The powers of mourning and violence*. London: Verso.
- Aronsohn, L. (2019). Bureaucracy and moral responsibility revisited. *Journal of Political Philosophy*, 27(2), 145–163.
- Müller, J. W. (2011). *Contest-ing democracy: Political ideas in twentieth-century Europe*. New Haven, CT: Yale University Press.